शिक्षा में भारतीयता

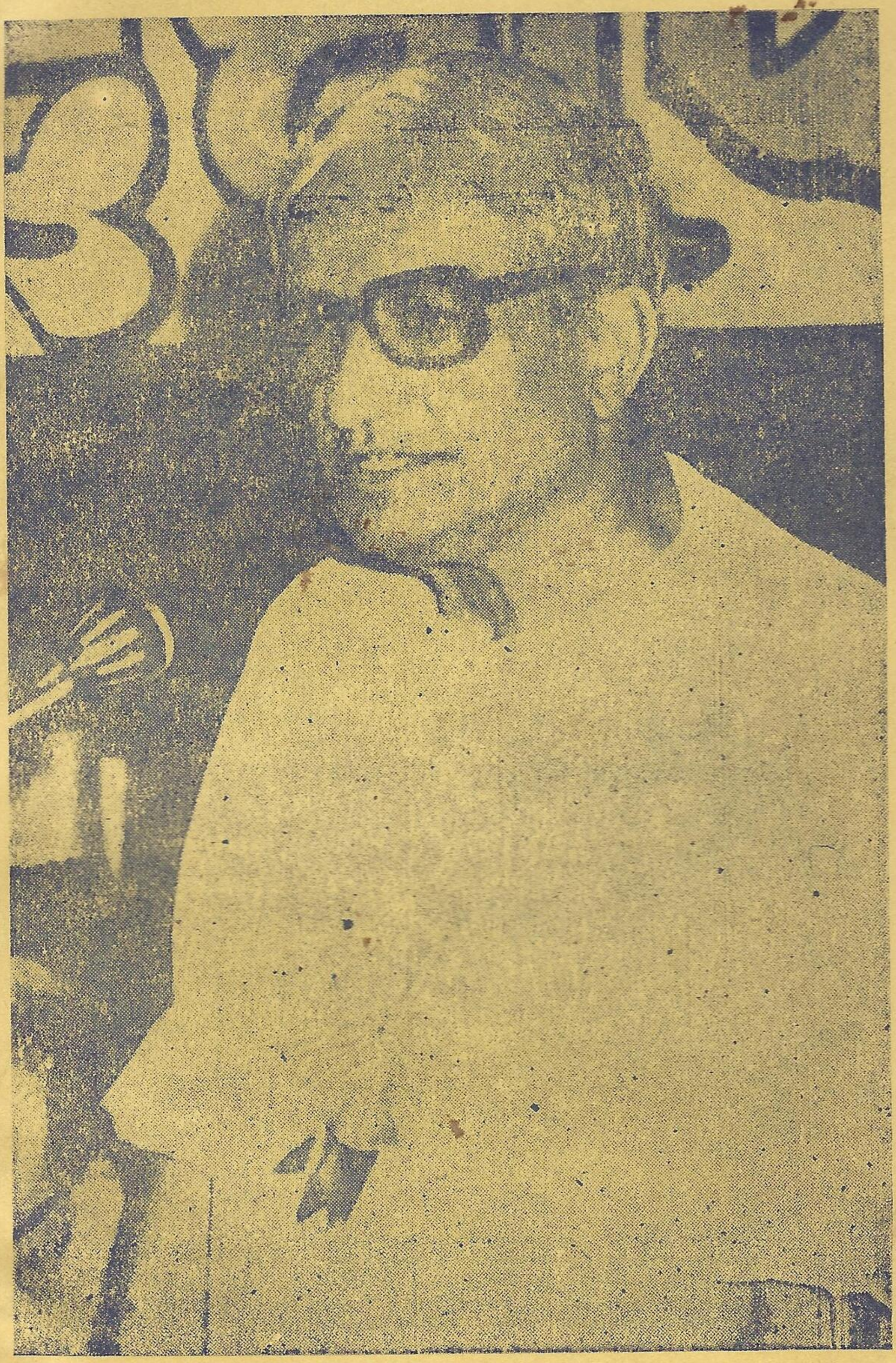

दत्तोपंत ठेंगड़ी

झाँसी में आयोजित गोष्ठी–शिक्षा में भारतीयता

डॉ० हरिमोहन गुप्त, **मा० दत्तोपंत ठेंगड़ी** (मुख्य वक्ता), डॉ० बी० आर० शर्मा (अध्यक्ष),
श्री पुरुषोत्तम नारायण सिंह (प्रदेश संगठनमंत्री)।

शिक्षा में भारतीयता

दत्तोपंत ठेंगड़ी

प्रकाशक—
भारतीय शिक्षण मंडल, उ० प्र०
१ नवीन मार्केट, कैसरबाग
ल ख न ऊ

● प्रकाशकः भारतीय शिक्षण मंडल, उ०प्र०
२ नवीन मार्केट, कैसरबाग,
लखनऊ

● मुद्रकः चित्रसेन प्रिंटिंग प्रेस, राहुलनगर
आजमगढ़

● प्रकाशन-वर्ष : विवेकानंद-जयंती
१२ जनवरी १९८६

● प्रथमा वृत्ति : ५०००

● संकलयिता : पुरुषोत्तम नारायण सिंह
संगठन मंत्री
भारतीय शिक्षण मंडल, उ०प्र०
२, नवीन मार्केट, कैसरबाग
लखनऊ

मूल्य :
दो रुपया मात्र २)

प्रस्तावना

भारतीय शिक्षण मण्डल एक निश्चित उद्देश्य लेकर सामने आया है और वह लक्ष्य है, शिक्षा में भारतीयता, भारतीय संस्कृति एवं भारतीय जीवन-मूल्यों की प्रतिष्ठा के साथ उसे आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की उपलब्धियों से संयुक्त कर आधुनिक भारत के अनुरूप बनाने का संकल्प। इसके लिए हमें अपने सही इतिहास को पहचानना तथा अपने गौरवपूर्ण भूतकाल की श्रेष्ठ उपलब्धियों का पाथेय लेकर आज के वैज्ञानिक युग की देहरी पर पहुँचना होगा।

इधर भारत सरकार ने नयी शिक्षानीति पर बहस चलाया है। उसने 'शिक्षा की चुनौती' नामक अपनी पुस्तिका भी प्रकाशित की है जिसमें देश के विविध क्षेत्रों से आये शिक्षा-व्यवस्था की विसंगतियों और परिवर्तन की दिशाओं के संकेत हैं। भारतीय शिक्षण मंडल यह परिवर्तन अनिवार्य मानता है और उसने १९७७ ई० में ही २५०० शिक्षाविदों से संपर्क स्थापित कर एक प्रश्नावली का निर्माण किया जिसमें शिक्षा के बर्तमान स्वरूप के परिवर्तन की दिशाओं के संकेत सूत्रबद्ध थे। उसके आधार पर १९७९ ई० में 'राष्ट्रीय शिक्षानीति' पर एक पुस्तिका प्रकाशित की गयी जिसे देश के कोने-कोने में शिक्षाविदों, प्राध्यापकों, शिक्षक-संगठनों, शिक्षा-संस्थाओं, सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तकों में बितरित करके उनके विचारों को आमंत्रित किया गया। इस विचार-संग्रह के पश्चात् दिल्ली में एक अखिल भारतीय चर्चा-सत्र की योजना की गई जिसमे तत्कालीन उपराष्ट्रपति माननीय श्री जत्ती तथा तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मंत्री श्री प्रताप चन्दर ने भी अपने विचारों को व्यक्त किया। उत्तर भारतीय प्रान्तों का अक्टूबर १९८३ में ग्वालियर में एवं दक्षिण भारतीय प्रान्तों का नवम्बर १९८५ में हैदराबाद में आयोजित चर्चा-सत्रों में रा० स्व० संघ के सर कार्यवाह मा० राजेन्द्र सिंह, पद्मश्री डॉ० वाकणकर, केन्द्रीय मंत्री श्री शिवशंकर, स्वामी रंगनाथानन्द जी जैसे श्रेष्ठ व्यक्तियों का दिशा-दर्शन प्राप्त हुआ।

इसी कड़ी में उत्तर प्रदेश में "शिक्षा में भारतीयता" विषय पर संगोष्ठी करने की योजना बनी। २० अगस्त ८५ को संसद के पटल पर पर "नई शिक्षानीति एक चुनौती" का प्रारूप रखा गया। उक्त परिपत्रक

पर देश व्यापी चर्चा का दौर प्रारम्भ हुआ है। इस क्रम में भारतीय शिक्षण मंडल उ० प्र० ने इस प्रस्तावित नयी शिक्षानीति के आधारभूत विन्दुओं पर चर्चा चलाने का संकल्प लिया और उसके लिए सुविख्यात विचारक एवं पूर्व सांसद माननीय दत्तोपंत ठेंगड़ी से सम्पर्क स्थापित कर गोष्ठियों में प्रमुख वक्ता के रूप में रहने के लिए आग्रह किया गया। उन्होंने अपने व्यस्त कार्यक्रमों में से समय निकाल सुल्तानपुर, साकेत, लखनऊ, झांसी, गोरखपुर तथा बलिया में विषय के आधारभूत विन्दुओं का मूलगामी एवं विचारोत्तेजक विवेचन किया। इन गोष्ठियों में बहुत अधिक संख्या में प्रबुद्ध नागरिक एवं शिक्षाशास्त्री सहगामी बने। कुंवर सिंह महाविद्यालय के प्राचार्य हरिहर प्रसाद सिंह, पूर्व प्राचार्य डॉ० रामशंकर तिवारी एवं गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्रवक्ता डा० शिव शंकर वर्मा आदि ने मा० ठेंगड़ी जी के विचारों की सराहना की। उनके अनुसार आज तक शिक्षा के सम्बन्ध में ऐसे महत्त्वपूर्ण विचार सुनने को नहीं मिले थे। उन लोगों का कहना था कि यह चिन्तन मौलिक, सामयिक और हमारी राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप है।

इसमें माननीय ठगड़ी जी के भाषणों को ही सूत्र-बद्ध कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। उनकी भाषा और पदावलियों को उसी रूप में प्रस्तुत किया गया है जिस रूप में उन्होंने भाषण में कहा था। अतः अंग्रेजी के बहुत से शब्द, वाक्य, वाक्यांश इसमें आये हैं। मूल-भावों को यथावत् आप के पास पहुँचाने की दृष्टि से इनमें कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। पुस्तक का प्रकाशन शीघ्रता में होने के कारण त्रुटियाँ सम्भव हैं, उसके लिए क्षमा करेंगे। इस प्रकाशन में सहयोगी सभी बंधुओं के प्रति हम आभारी हैं, अपने मित्र डॉ० कन्हैया सिंह के प्रति हम विशेष कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने निर्देशन में मुद्रण कार्य कराने का दायित्व निभाकर हमारी कई कठिनाइयों को हल कर दिया। इस सम्बन्ध में आप भी अपने विचारों और प्रतिक्रियाओं से हमें अवगत करावें तो बड़ी कृपा होगी।

२, नवीन मार्केट
कैसरबाग, लखनऊ

पुरुषोत्तम नारायण सिंह
संगठन-मन्त्री
भा० शि० मं०, उ० प्र०

नयी शिक्षा नीति : कुछ प्रश्न

भारत सरकार की भावी शिक्षानीति हेतु परिपत्रक के विषय में चलाई जा रही राष्ट्रीय चर्चा का एक अंग यह आज की सभा का स्वरूप है। इसका अर्थ यह है कि यह विचार-सभा है; प्रचार-सभा नहीं। इसी दृष्टि से इसकी ओर देखा जाय, यह प्रार्थना है।

यह हर्ष का विषय है कि शिक्षानीति के विषय में पुनर्विचार करने का निर्णय शासन ने लिया है। इसकी आवश्यकता तो सन् १९४७ से ही प्रतीत होती थी। सन् १९७७–७८ में इस दिशा में केन्द्र सरकार ने कुछ पहल भी की थी, किन्तु बाद में वह उपक्रम ठंढे बस्ते में डाल दिया गया। It is never too late to mend. इस दृष्टि से आज भी सरकार यदि इस विषय को गम्भीरता से लेती है तो यह स्वागतार्ह ही है।

किन्तु इस संबंध में जो प्रक्रिया स्वीकार की गयी है, वह संदेह निर्माण करने वाली है। सरकार ने इस परिपत्रक के विषय मे राष्ट्रीय चर्चा के लिए आह्वान किया है, यह तो ठीक ही है। किन्तु यह राष्ट्रीय चर्चा पूरी होने के पश्चात्, उसके आधार पर कुछ उपयुक्त निष्कर्ष निकालने के बाद सातवीं

पंचवार्षिक योजना को अन्तिम स्वरूप दिया जाता तो वह औचित्यपूर्ण तथा व्यावहारिक होता। यह चर्चा प्रारम्भ होने के पूर्व ही सातवीं पंचवार्षिक योजना को अन्तिम स्वरूप दिया गया है, इतना ही नहीं तो Model schools शुरू करने तथा अन्य कुछ विषयों पर निर्णय ले लिया गया है। अब चर्चा के लिए किया गया आह्वान Putting the cart before the horse, इस स्वरूप का है। यह गलती इस विषय पर सरकार की घोषित गंभीरता के साथ मेल नहीं खाती।

इस परिपत्रक में प्राथमिकताओं के विषय में स्पष्ट दिशा-दर्शन नहीं है। विद्या के विभिन्न केन्द्रों से सरकार को क्या अपेक्षाएँ हैं तथा इक्कीसवीं शताब्दी का स्वागत करने के लिए देश को सिद्ध करने की दृष्टि से प्राथमिकताओं का क्रम कैसे रहना चाहिए, इस विषय पर यह परिपत्रक मौन है। शिक्षानीति के संबंध में समग्रता से सर्वंकश विचार इसमें नहीं दिखाई देता। उदाहरण के लिए Developmental planning और Educational planning इनका सामंजस्य कैसे हो ताकि सभी व्यक्तियों की प्रकृतिगत गुणवत्ता के संपूर्ण विकास का प्रतिफल और हमारी राष्ट्रीय अर्थ-रचना की संपूर्ण आवश्यकताओं का अधिकतम मेल बिठाया जाय, इस दृष्टि से परिपत्रक में विचार नहीं रखा गया है। शिक्षा-क्षेत्र के लिए साधनों के अभाव का उल्लेख तो इसमें है किन्तु इस विषय में भी सर्वंकश विचार नहीं दिया गया। केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों तथा उद्योग और उद्योगपतियों की भूमिका का इसमें कुछ निर्देश है, किन्तु in service training, कर्मचारियों के अभिभाव्यो की Vocational training, अपने-अपने उद्योग के लिए आवश्यक Vocational तथा Engineering की ट्रेनिंग के साथ ही शिक्षा-क्षेत्र के सर्वसाधारण विकास के लिए अधिक योगदान करना उद्योगपतियों का कर्तव्य है। वैसे ही शिक्षा पर होने वाले व्यय को शिक्षा मंत्रालय की ही जिम्मेदारी न समझकर शिक्षा से लाभान्वित होने वाले तथा संबधित सभी मंत्रालयों का भी यह उत्तरदायित्व माना जाना चाहिए तथा शिक्षा-क्षेत्र में उनका भी योगदान चाहिए—जैसे उद्योग, कृषि, वाणिज्य, Communication आदि मंत्रालय। इस विषय पर गहराई से विचार कर योजना प्रस्तुत करने का कार्य इस परिपत्रक में नहीं किया गया है। किन्तु उससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस विषय का विचार नयी परिस्थि-

तियों तथा आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में क्रान्तिकारी ढंग से न करते हुए केवल परम्परागत पद्धति की चौखट के अन्तर्गत ही किया गया है। यह तो स्वीकार किया गया कि प्राथमिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के सम्बन्ध में तथा Vocational training के समुचित विस्तार के विषय में, वैसे ही प्रौढ़ शिक्षा के विषय में हम अब तक असफल रहे हैं किन्तु यह बात नहीं सोची गयी कि इन विषयों में सफलता प्राप्त करनी तब तक सम्भव नहीं है जब तक हम केवल परम्परागत चौखट के ही अन्तर्गत विचार करते रहेंगे। सर्वसाधारण जनता में इस विषय में उत्साह निर्माण न हुआ और उनकी स्वयंसेवी संस्थाओं ने इसमें जिम्मेदारी नहीं उठाई तो यह सारे लक्ष्य पूर्ण होना असंभव है। ऊपर से लाई गयी योजना से आंशिक सफलता प्राप्त हो सकती है, किन्तु पूर्ण यश-प्राप्ति के लिए आवश्यक धन की पूर्ति तथा कार्यकर्ताओं की संख्या तभी उपलब्ध हो सकती है जब इस विषय को एक Mass movement का रूप प्राप्त होगा। इस तरह का दृष्टिकोण इस परिपत्रक में नहीं दिखाई देता। प्राथमिक शिक्षा के साथ पूर्व प्राथमिक शिक्षा को जोड़ना, परिवार—यह सर्वप्रथम पाठशाला है और माता-पिता सर्वप्रथम अध्यापक हैं, यह ध्यान में रखकर सम्पूर्ण समाज का वायुमंडल शिक्षानुकूल तथा संस्कारानुकूल बनाना आदि प्राथमिक बातों की ओर इसमें ध्यान नहीं दिया गया है।

समग्रता के अभाव के और कुछ उदाहरण दिये जा सकते हैं—भारत की जनसंख्या का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा वनवासियों का है। यह तो ठीक है कि उनको सभी दृष्टियों से राष्ट्रीय मुख्य प्रवाह में, अन्यों के स्तर पर लाना चाहिए। किन्तु इसका मतलब Regimentation नहीं हो सकता। वनवासी जीवन, उनकी समाज-रचना, उनका मनोविज्ञान इन सबकी कुछ ऐसी भी विशेषताएँ हैं जो वे छोड़ना नहीं चाहते और न ही उनको छोड़ना वनवासियों के लिए उपयुक्त रहेगा। एकता का अर्थ एकरूपता नहीं है। उनकी अपनी विशेषताओं को कायम रखते हुए उनका गुण-कर्मशः विकास कैसे किया जाय इस पर अलग से विचार होने की आवश्यकता है। अफ्रीका के कुछ देशों में वनों का मूल्यांकन करते हुए उनमें किन-किन उद्योगों की संभावनाएँ हैं, इसका सर्वेक्षण कर उस दृष्टि से उपयुक्त प्राथमिक तकनीकी का विकास तथा तदनुरूप उसकी शिक्षा की योजना बनाने का प्रयास किया गया है। वनोद्योग तथा वन-सेवाओं (Forest-

services) के लिए बनवासियों को तैयार करना, यह शिक्षा का एक अंग होना चाहिए। इस दृष्टि से हमारे एक मित्र प्रयत्नशील हैं और यह अध्ययन करते हुए उपयुक्त पाठ्यक्रम का विकास करने के लिए उन्होंने नगर हवेली में 'सूर्य-निकेतन' नामक संस्था का सूत्रपात किया है। यह महत्त्वपूर्ण पहलू इस परिपत्रक की आँखों से ओझल हुआ है।

भारत गाँवों में बसा हुआ है। ग्रामीण जीवन की अपनी एक पद्धति है। उससे मेल खाने वाली, विशेष रूप से कृषि-कार्य की समय-सारिणी के साथ मेल खाने वाली पद्धति ही वहाँ आवश्यक होगी। शिक्षा के लिए प्राथमिक साधन भी वहाँ आज उपलब्ध नहीं है। ग्रामीण जीवन-पद्धति में अपने परम्परागत कौशलों को आधुनिकतम सुधार के साथ सीखने की व्यवस्था और earning and learning साथ-साथ चल सके, ऐसी योजना वहाँ आवश्यक है। इस बात को ध्यान में न रखते हुए यह परिपत्रक तैयार किया गया है।

इस परिपत्रक में शिक्षा की कोई भी Philosophy, कोई भी दर्शन बताया नहीं गया और शिक्षा के आज के ढाँचे और Methodology में किसी भी मौलिक परिवर्तन का सुझाव नहीं दिया गया। यहाँ तक कि महात्मा जी की नयी तालीम पद्धति को नयी परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में कौन से सुधार करते हुए उपयुक्त बनाया जा सकता है, इस पर भी इसमें विचार नहीं है। जहाँ पचास प्रतिशत पाठशालाओं में खड़िया और श्यामपट जैसी प्राथमिक वस्तुएँ भी उपलब्ध नहीं हैं, वहाँ इस परिपत्रक में दिये गये विचारों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्र की प्रगति होना असम्भव है। इस दृष्टि से इस परिपत्रक को यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि बड़ी भारी मात्रा में पुरानी शराब ही नयी बोतलों में भरकर यह परिपत्रक हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है।

चिन्तन का नया आयाम

कई त्रुटियाँ परिपत्रक में हैं तो भी यह परिपत्रक विचारकों के लिए उपयुक्त दस्तावेज बन गया है। शोध के विषय में शास्त्रज्ञ कहते हैं कि To know the unknown, you must first know everything known so for about the subject. इस दृष्टि से यह परिपत्रक उपयुक्त है। शिक्षा क्षेत्र की दृष्टि से आज हम कहाँ खड़े हैं इस विषय में बहुत सी उपयुक्त जानकारी इसमें ग्रथित है। इसमें यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि भारत का शिक्षा-तंत्र कुंठित हुआ है। N.C.E.R.T. (National Council of Educational Research and Training) N.I.E.P.A. (National Institute of Educational Planning and Administration) and U.G.C. (University Grants Commission) आदि संस्थाओं के सुझावों को तथा प्रयासों को उचित महत्व नहीं मिला। आज की अवस्था को state of drift and adhocism कहा जा सकता है। पंच वार्षिक योजनायें बनाने के समय ही तत्कालीन शिक्षा-क्षेत्र का मूल्यांकन होना चाहिए। वह नहीं किया जाता। योजनाओं में शिक्षा को उचित अग्रक्रम नहीं मिलता। तृतीय पंचवार्षिक योजना का अपवाद छोड़ दिया जाय तो योजना व्यय में शिक्षा का हिस्सा घटता ही जा रहा है। प्रथम योजना में वह ७.२% था और छठवीं योजना में २.६% रहा। निरक्षरों की संख्या बढ़ रही है यद्यपि उनका प्रतिशत कम हो रहा है। हमारे चौबीस करोड़ चालीस लाख मेहनतकश लोगों में ६०% निरक्षर हैं। १९५१ में निरक्षरों की संख्या तीस करोड़ थी। सन् १९८१ में यह संख्या ४३ करोड़ ७० लाख थी। ऐसा ही चला तो सन् २००० में भारत के निरक्षरों की संख्या ५० करोड़ हो जायेगी, और World Bank के मतानुसार उस समय दुनियाँ के १५ से १९ वर्ष के Age-Group

में दुनियाँ के निरक्षारों का ५४% भारत में रहेगा। निरक्षरों के अलावा प्रारम्भिक अवस्था में ही Drop-outs ७५% से अधिक रहते हैं। परीक्षाएं तथा Grades की विश्वसनीयता जन-मानस में समाप्त हुई है। वाचनालय, प्रयोगशालाएँ, खेल के मैदान, बिल्डिंग्स, यहाँ तक कि Black-Board, Chalk-sticks और मूत्रालय-शौचालय आदि प्राथमिक सुविधाओं की भी अवस्था संतोषजनक नहीं है। तृतीय श्रेणी में, जैसे तैसे परीक्षा पास करने वालों की संख्या बढ़ रही है। परीक्षा के लिए अयोग्य साधनों का उपयोग तथा सर्व-साधारण अनुशासनहीनता भी बढ़ रही है। प्रौढ़-शिक्षा तथा Vocationalisation के विषय में तथा प्राथमिक शिक्षा के विषय में हम असफल ही रहे हैं। राज्य-सरकारें इस विषय में उदासीन हैं। प्रचलित शिक्षा-नीति में स्पष्टता नहीं है। Centralization, bureaucratisation, non-enforcement of discipline standards and preformance norms आदि से वह पीड़ित हैं। शिक्षा संस्थाएँ समाज के लिए Accountable नहीं रहीं। शिक्षा-संस्थाओं का उनकी स्थानीय community के साथ integration नहीं है। पाठशाला स्थानीय विकास का केन्द्र बने, यह कल्पना साकार नहीं हो सकी। एक ओर प्राथमिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के विषय में हम असफल रहे और दूसरी ओर उच्च स्तरों पर गुणात्मकता की दृष्टि से भी हम यशस्वी नहीं हो सके। कोठारी कमीशन ने कहा था कि गुणात्मक दृष्टि से दुनियाँ के किसी भी देश की स्पर्धा में टिक सकने वाली हमारी उच्च श्रेणियाँ होनी चाहिए। वैसे, गुणवत्ता की देश में कमी नहीं है। जगदीश चन्द्र बोस, सी० वी० रमन, हरगोविन्द खुराना जैसे कई जगन्मान्य श्रेष्ठ लोग हमारे बीच में हैं। आज की विपरीत अवस्था में भी हम दुनियाँ की Third largest scientific community हैं। फिर भी यह शिक्षा-नीति की असफलता रही कि– Oxford, Cambridge, Harvard, Yale, Stanford जैसी एक भी शिक्षा-संस्था हम निर्माण नहीं कर सके।

सन् १९६८ में, कोठारी कमीशन की सिफारिशों के पश्चात् अपनायी गयी नयी नीति की असफलता के तीन प्रमुख कारण परिपत्रक ने बताये हैं। कटिबद्धता की भावना का अभाव, साधनों का अभाव तथा व्यवस्थात्मक परिवर्तन का अभाव। आज की प्रचलित व्यवस्था में जिनका निहित स्वार्थ है

ऐसे यथास्थितिवादी लोग भी किसी भी नयी रचना का विरोध करते हैं, इसकी भी चर्चा परिपत्रक में की गयी हैं।

इसके अलावा अध्यापकों की Training, राजनैतिक हस्तक्षेप, ब्यूरोक्रसी का दबाव, शिक्षा-संस्थाओं की स्वायत्तता तथा सामाजिक Accountability, जीवन-मूल्य, चरित्र-निर्माण, इक्कीसवीं शताब्दी के आह्वान, Delinking of Degrees from jobs आदि प्रयोजनीय विषयों का उल्लेख परिपत्रक में है। जिस-जिस बात का उल्लेख किया गया है वे सारी परिपूर्ण ढंग से हैं ऐसा तो नहीं कहा जा सकता। उदाहरणार्थ, शिक्षा के सामान्य उद्देश्य, शिक्षा को सुधारने के उपाय, उच्च शिक्षा का लक्ष्य, शिक्षा की पूर्ण स्वायत्तता की कल्पना, आधुनिकीकरण की कल्पना, औपचारिकेतर शिक्षा का स्वरूप, आरक्षण का स्थान, नीति के क्रियान्वयन में सम्भावित बाधाएँ आदि कितने ही विषयों में कौन-कौन सी नई बातें, नई वल्पनाएँ, नये विचार जोड़ने की आवश्यकता है, इसका स्पष्ट दिग्दर्शन भारतीय शिक्षण मण्डल ने अपने ज्ञापन में किया है। मतलब यह कि परिपत्रक में किये हुए उल्लेख परिपूर्ण नहीं हैं। यह स्पष्ट है तो भी परिपत्रक का महत्व बहुत है क्योंकि विभिन्न तथ्यों का वस्तुनिष्ठ विवरण प्रस्तुत करने का साहस परिपत्रक में दिखाया है। जैसा पहले कहा गया, अज्ञात बातें खोजकर निकालने के लिए यह आवश्यक है कि विषय से संबन्धित अब तक की सभी ज्ञात बातें जान ली जायँ। उसी के आधार पर हम अज्ञात की ओर बढ़ सकते हैं। इस दृष्टि से इस परिपत्रक ने महत्वपूर्ण कार्य किया है। यद्यपि यह सही है कि परम्परागत चौखट के अन्तर्गत रहते हुए परिपत्रक ने पूरा चिन्तन किया है। इस चिन्तन में न क्रान्तिकारिता है और न समग्रता है। इसके कारण भविष्य के लिए दिशा-दर्शन की दृष्टि से यह दस्तावेज उपयुक्त नहीं है, किन्तु इस विषय पर चिन्तन करने वालों की पृष्ठभूमि के नाते यह परिपत्रक बहुत उपयुक्त होगा। एक प्रकार से हम कह सकते हैं कि यह परिपत्रक चिन्तन का एक नया आयाम अवश्य प्रस्तुत करता है जिसके आधार पर चर्चाओं-परिचर्चाओं द्वारा नयी शिक्षानीति को भारत की आवश्यकताओं के अनुरूप एक रूप प्रदान किया जा सकता है।

२

विचारों की समग्रता और स्पष्टता

विचारों की समग्रता तथा स्पष्टता का अभाव किस तरह दुरवस्था निर्माण कर सकता है, इसका अनुभव हम अब तक लेते आ रहे हैं। विचारों की समग्रता के अभाव का एक उदाहरण इसके पूर्व प्रस्तुत किया है। विचारों की स्पष्टता के अभाव का भी उदाहरण प्रस्तुत करना उपयुक्त रहेगा। Vocational-isation के विषय में स्पष्टता का अभाव अब तक की शिक्षा नीति में तो है ही, किन्तु इस परिपत्रक में भी है। यह शिक्षा कौन सी Stage में और किस-किस के लिए प्रारम्भ की जाय ? प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने कहा है कि,"Vocational education will be re-organised to align it with industry, agriculture, communication and other productive sectors of the economy." इस दृष्टि से यह भी सोचना ठीक ही है कि यह शिक्षा practical स्वरूप की होनी चाहिए, खेतों पर, कारखानों में, उद्योगों में, फर्मों में होनी चाहिए, शिक्षा की समाप्ति के पश्चात् तुरन्त रोजगार मिल जाय, इस व्यवस्था के साथ होनी चाहिए, और इस दृष्टि से उद्योग, कृषि, यातायात, अन्य उत्पादक इकाइयाँ तथा विभाग और administration में नये रोजगारों की संभावनाओं के साथ इसका मेल बिठाना चाहिए। यह सब उचित ही है। किन्तु चर्चा का विषय एक तो यह है कि यह vocational training किस stage पर प्रारम्भ की जाय और दूसरा यह कि किस-किस के लिए। क्या यह बिलकुल प्रारम्भिक अवस्था से ही प्रारम्भ हो, उस अवस्था में aptitude-test कैसे हो सकता है ? जिनकी गुणकर्मगत प्रवृत्ति वकील, डॉक्टर, इंजीनीयर, शासक, व्यवस्थापकीय विशेषज्ञ आदि बनने की है, क्या उनका भी प्रारम्भिक स्थिति में ही aptitude-test हो सकता है ? क्या उनको भी प्रारम्भ से ही vocational training देना उचित रहेगा ? यह training तो

प्रत्यक्ष कार्यस्थल पर ही अच्छी हो सकती है, और उसके लिए समय देना पड़ता है। क्या हर एक को इस तरह समय देने के लिए बाध्य किया जाय? वह stage कौन सी माननी चाहिए जिसमें योग्य aptitude-test के आधार पर vocational training के लिए कौन उपयुक्त है; यह तय किया जा सकता है? इसके विषय में अनुभव पर आधारित स्पष्टता अब तक नहीं है।

फिर, vocational training का विचार अकेले में, in isolation, नहीं किया जा सकता। स्थानीय विकास की संभावनाएँ और रोजगार के संभाव्य अवसर– इन दोनों की पृष्ठभूमि में ही इस विषय का विचार करना उपयुक्त रहेगा। इस दृष्टि से विविध उद्योगों में तथा व्यवसायों में आज और निकट भविष्य में मनुष्य-बल की आवश्यकता किस तरह की होगी यह बात प्रथम स्पष्ट होनी चाहिए। वैसे ही, इस दृष्टि से स्थानीय तथा जिले के स्तर पर उपलब्ध material resources तथा man-power का सर्वेक्षण होना चाहिए। वैसे ही स्थानीय तथा जिले के विकास की आवश्यकताओं का समग्र विचार होना चाहिए। जैसे, जिले के लिए उपयुक्त उद्योग और व्यवसाय, आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएँ, आवास की आवश्यकताएँ, आवश्यक शिक्षा-केन्द्र, चिकित्सालय, बाँध, नहर, पुल, रास्ते आदि। इन सबका विचार करते हुए जिले की योजना बनाई जाय। उसके लिए उचित मापदण्ड के आधार पर उपयुक्त जिला समिति बनाई जाय और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह कि इस योजना के विषय में अपनेपन का भाव और पहल करने की उमंग जिले की आम जनता में जाग्रत की जाय। यह सब होगा तभी vocationalisation के तत्त्व को व्यावहारिक रूप दिया जा सकता है। आज की स्थिति में यह योजना हवा में ही है। दूसरे, बात यह हो रही है कि लोगों के मन में इसका महत्त्व जँच जाय, इस हेतु इसको प्रमाणबाह्य महत्त्व दिया जा रहा है और यह आभास निर्माण किया जा रहा है कि मानो शिक्षा का सर्वोच्च उद्देश्य रोजगार-प्राप्ति ही है। वास्तव में यह धारणा गलत है। बेरोजगारी से पीड़ित भारत में रोजगार देने वाली शिक्षा का महत्त्व है; इस विषय में दो राय नहीं हो सकती। किन्तु उसी को शिक्षा का सर्वोच्च उद्देश्य नहीं माना जा सकता। व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास यही सर्वोच्च सांस्कृतिक उद्देश्य शिक्षा का है। यह sense of proportion छोड़ने की आवश्यकता

इसलिए प्रतीत होती है कि अब तक के विचारों में सर्वांगीणता और स्पष्टता नहीं है।

वैसे तो vocational training के विषय में सभी विकासशील देशों में गम्भीर चर्चा चल रही है। हाल ही में जकार्ता में हुए दशम एशियन रीजन्स कॉन्फरेन्स में इस विषय पर एशिया तथा पैसिफिक रीजन के देशों में विचारों की तथा अनुभवों की लेन-देन कर कुछ महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले हैं। वे शीघ्र ही हमारे पास पहुँचेंगे। किन्तु स्पष्टता के अभाव में इस विषय में भी किस तरह drifting चल रही है, यह केवल एक उदाहरण के नाते यहाँ प्रस्तुत किया है:

जो drifting इस विषय में है वही अन्य विषयों में भी है, यह अलग कहने की आवश्यकता नहीं।

४

शिक्षा की प्राचीन भारतीय दृष्टि

भारत सरकार के परिपत्रक 'शिक्षा की चुनौती' में जब विचारों की समग्रता तथा स्पष्टता किसी भी विषय में नहीं है तो केवल 'शिक्षा में भारतीयता' इस विषय में समग्रता और स्पष्टता का दर्शन होगा, यह अपेक्षा अवास्तविक ही है ।

यह तो नहीं कहा जा सकता कि इस परिपत्रक में भारतीयता को सूक्ष्म आँखों से ओझल किया गया है। राष्ट्र-निर्माण की दृष्टि से भारतीयता के पुनर्जागरण का महत्त्व यह परिपत्रक स्वीकार करता है किन्तु जहाँ किसी भी विषय पर शास्त्रशुद्ध विचार करने की प्रवृत्ति नहीं वहाँ इसी विषय पर शास्त्रशुद्ध विचार होगा, यह कैसे संभवनीय है ।

वास्तव में शिक्षा की भारतीय कल्पना, भारतीय पद्धति तथा भारतीय उद्देश्य इन सबका जिक्र यहाँ होने की आवश्यता थी। भारत यह प्राचीनतम सनातन राष्ट्र है। जिस समय शेष बाह्य जगत् अज्ञानांधकार में था, उस समय भारत में विद्या का, संस्कृति का उल्लेखनीय प्रचार हुआ था और हमारे पूर्वजों ने सोचा था कि हम सुसंस्कृत हैं, बाकी असंस्कृत संसार को भी हम अपने ही सांस्कृतिक स्तर पर ले आयेंगे–कृण्वन्तो विश्वमार्यम्· । उनकी यह प्रतिज्ञा थी कि—

एतद्देश्य प्रसूतस्य सकासादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन पृथ्वीयां सर्व मानवाः ॥

इतनी प्रगति किसी सुव्यवस्थित पद्धति के अभाव में हुई होगी क्या ? यह संभव नहीं। यहाँ शिक्षाशास्त्र विकसित था। शिक्षा तथा संस्कार दोनों का एकत्र परस्पर पूरक विचार यहाँ हुआ था। औपचारिक शिक्षा की कल्पना अभारतीय है। इसी कारण हम आज देखते हैं कि औपचारिक शिक्षाप्राप्त विद्वान भी कभी

कभी संस्कृतिविहीन दिखाई देते हैं और उनकी तुलना में अधिक सुसंस्कृतता देहातों में रहने वाले हमारे अनपढ़ गुरुजनों में प्रकट होती है। औपचारिक शिक्षा तथा संस्कृति इनकी Dichotomy प्राचीन भारत में नहीं थी। उस समय अत्यधिक आग्रह संस्कारों पर था। यहाँ तक कि संस्कारों की प्रणाली का प्रारंभ व्यक्ति के जन्म के पूर्व से ही होता था तथा यह प्रणाली व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् तक चलती थी। ये षोडश संस्कार आज की परिस्थिति में जैसे के वैसे अनुकरणीय नहीं हो सकते, यह सही है। किन्तु उनके पीछे क्या तत्त्व थे, वे तत्त्व किस तरह व्यक्ति-जीवन तथा समाज-जीवन पर परिणाम करते थे और उनमें से अच्छे परिणाम आज भी प्राप्त करने के लिए संस्कारों की पुनर्रचना युगानुकूल किस तरह करनी चाहिए, यह विचार तो राष्ट्र-निर्माण के लिए आधारभूत स्वरूप का ही है। राष्ट्र का सामान्य व्यक्ति जिस स्तर का होगा, उसी स्तर का राष्ट्र भी रहेगा। इस दृष्टि से जो गहन तथा मौलिक विचार हमारे पूर्वजों ने किया और उसके आधार पर गुरुकुल आदि पद्धतियाँ बिठायीं, उन सबका अध्ययन करके उसका कितना हिस्सा आज शिक्षा-पद्धति के लिए उपयुक्त बनाया जा सकता है, यह सोचना आवश्यक है। इस पहलू पर इस परिव्राजक ने ध्यान नहीं दिया, यह बड़ी त्रुटि है।

हमारे देश में हर एक व्यक्ति के सभी गुणों का संपूर्ण विकास और इस विकास के फल को समाजपुरुष के चरणों पर अर्पण करने की भावना का निर्माण, यह शिक्षा-संस्कारों का अन्तिम लक्ष्य माना गया था। इस दृष्टि से हर एक व्यक्ति की रुचि-प्रकृति-प्रवृत्ति तथा गुण-कर्म का शिशु अवस्था में ही आकलन और उसके आधार पर व्यक्ति के विकास का अनुकूल पाठ्यक्रम यह हमारी विशेषता थी। आज के अनुसार Square ball in a round hole यह परिस्थिति उस समय निर्माण नहीं होती थी। हर एक व्यक्ति के सभी गुणों का संपूर्ण विकास हो और इस तरह सभी के विकास का प्रतिफल तथा राष्ट्र की समग्र आवश्यकताओं का मेल बिठाने वाला राष्ट्रीय नियोजन यह हमारी एक विशेषता रही है।

आज की शिक्षा-पद्धति को एक अधिकारी व्यक्ति ने Dumping system या Banking system कहा है। इसके अन्तर्गत अध्यापक पूर्व-नियोजित जानकारी विद्यार्थियों के दिमाग में थोप देता है। यह ग्रहण करने की

प्रवृत्ति, उत्सुकता या जिज्ञासा विद्यार्थी में है या नहीं, यह बात वह सोचता नहीं। हमारे यहाँ प्रवृत्ति, उत्सुकता, जिज्ञासा देखकर योजना बनती थी। हर एक विद्यार्थी के लिए इन सब बातों को देखकर उसकी Natural pacing के अनुसार उसको क्रमशः ज्ञान दिया जाता था। जिसको आज Friar ने Dialoguical system कहा है, वह संवादात्मक पद्धति प्राचीन भारत में थी। शिक्षक अपने विद्यार्थी को पूरी तरह जान लें स्वयं अपने को पूरी तरह जान लेने का अवसर वह विद्यार्थी को प्रदान करे और इस तरह एक दूसरे को पूर्ण-रूपेण जानते हुए दोनों मिलकर बाह्य जगत् का संयुक्त अन्वेषण करें इस पद्धति को Friar ने Revolutionary system of education ऐसा नाम दिया है। और संयोग की बात है कि प्राचीन भारत में भी बहुत मात्रा में इसी से मेल खाने वाली पद्धति थी। इसी कारण यहाँ कहा गया था--- तेजस्विनावधीतमस्तु'। तुम्हारा और मेरा मिलकर होने वाला संयुक्त अध्ययन तेजस्वी रहे। Teacher should know his student to know himself i.e. the teacher fully, and thus knowing each other fully well both together should conduct-out investigation into the outer reality in keeping with the aptitude of the student. यही तत्त्व आज की Revolutionary system of education का है और प्राचीन भारत की शिक्षा-पद्धति का भी था। अंग्रेजों के आगमन के पश्चात् इस पद्धति को तत्त्व रूप से भी पूर्णतः समाप्त किया गया।

यह समाधान का विषय है कि N. C. E. R. T. में कुछ मात्रा में प्राचीन आधार पर वैकल्पिक शिक्षा-पद्धति विकसित करने की दृष्टि से विचार प्रारम्भ हुआ। N. C. E. R. T. के Deptt of Education in Science and Mathematics के Reader डॉ० आर० एन० माथुर इस दिशा में Physics से संबंधित कुछ प्रयोग कर रहे हैं। चार-छः विद्यार्थियों की छोटी इकाई बनाकर और उसका नेतृत्व थोड़े सीनियर विद्यार्थी को देकर वे प्रयोग चला रहे हैं। ऋग्वेद में बताई हुई मौलिक शिक्षा-पद्धति का आधार उन्होंने लिया है। उस आधार का विवरण किया गया है— "The student should learn one forth from the teacher, one forth from self-study;

one forth from inter-action with colleagues, and one forth during application from time to time." इस प्रायोगिक पद्धति को नाम दिया गया है—'Indivisually Guided System of Instruction.' (I. G. S. I.)। इस I. G. S. I. के प्रमुख Features बताए गए हैं—"Mastery learning, self-pacing, indivisualized instruction, instant rewards, and guided self-study." अब तक के सीमित अनुभव के आधार पर यह पाया गया है कि यह पद्धति सीनियर सेकण्डरी, कॉलेज तथा यूनीवर्सिटी के विद्यार्थियों के लिए तो उपयुक्त है। उसके नीचे के वर्गों के लिए उपयुक्त ऐसा modification इस पद्धति में किस तरह किया जा सकता है, यह सोचा जा रहा है।

वास्तव में इस पहलू पर परिपत्रक में अधिक विचार करने की आवश्यकता थी, वैसा नहीं हुआ, यह दुःख की बात है।

५

शिक्षा में भारतीयता

'शिक्षा में भारतीयता' का विषय आते ही पढ़े-लिखे लोगों के मन में एक प्रश्न उठता है कि क्या हमारी 'भारतीयता' आज के आधुनिकीकरण के जमाने में चल सकेगी या आधुनिकीकरण से मेल खा सकेगी ? क्या भारतीयता के परिप्रेक्ष्य में आधुनिकीकरण संभव है ? क्या विशुद्ध भारतीयता और आधुनिकता साथ-साथ चल सकती है ?

इसका उत्तर दूसरे एक प्रश्न के उत्तर पर अवलंबित है। हमारी धारणा क्या है ? Do we accept western paradigm as the universal model of progress and development ? यह मूल प्रश्न है। यह ठीक है कि चक्रानुक्रम से कभी यह देश ऊपर आता है तो कुछ समय के बाद यह नीचे जाता है और दूसरा कोई देश ऊपर आता है। कभी इसका साम्राज्य आता है, फिर यह नीचे जाता है तो दूसरा साम्राज्य प्राप्त करता है। कालक्रम से वह भी नीचे जाता है और फिर अन्य देश साम्राज्य सम्पन्न बन जाता है। इस तरह इतिहास ने सैकड़ों साम्राज्यों का उदय और अस्त देखा है। निकटतम भूतकाल में जिनके साम्राज्यों का विस्तार हुआ वे सारे श्वेत वर्णीय जातियों के देश थे। भारत पर भी उनका ही साम्राज्य था। यहाँ उनका साम्राज्य होने के कारण उन्होंने बारीकी से विचार किया कि इतने लम्बे-चौड़े देश में थोड़े से लोग आकर शासन चलायें यह तो कठिन दीखता है, तो क्या तरकीब करनी चाहिए कि जिसके कारण हम इस देश पर शासन चला सकें।

इसलिए मैकाले-पद्धति का निर्माण हुआ। उन्होंने विचारपूर्वक कुछ सिफारिशें दीं। उसमें प्रमुख बात यह थी कि भारतीय यदि अपनी परम्परा, इतिहास, संस्कृति का विस्मरण नहीं करता; अपने इतिहास और संस्कृति का स्मरण करता रहेगा तो इस देश पर शासन चलाना संभव नहीं है। उसके मन में

inferiority complex पैदा होनी चाहिए । जो कुछ भी भारतीय है वह inferior है, जो कुछ भी western है वह superior है, ऐसा भाव-निर्माण होना चाहिए। Inferiority Complex यदि भारतीयों के मन में निर्माण न हुई तो हम लोग यहाँ शासन नहीं चला सकेंगे। हमारे मन में आत्म-विस्मृति तथा आत्म-ग्लानि निर्माण हो, इसी दृष्टि से शिक्षा-पद्धति के माध्यम से इसका General propaganda हुआ। इतना ही नहीं तो, हमारे मन में संदेह, बुद्धि-भेद निर्माण करने वाली कई Theories जानबूझ कर उन लोगों ने चलाई और हमारे पढ़े-लिखे लोग उनके शिकार बन गये।

ऐसे वायुमण्डल में लोगों के मन में यह विचार आना स्वाभाविक है; क्योंकि कई दशकों से सर्वसाधारण विचार प्रचलित है कि जो कुछ भी पश्चिमी है वह progressive है, radical है, और जो कुछ भी भारतीय है वह प्रतिगामी है। इसके कारण यदि हमें प्रगतिशील राष्ट्र बनना है तो पश्चिम की नकल हमें करनी ही चाहिए, यह विचार हमारे मन में आता है।

१. ऐतिहासिक विकास-क्रम :—उन्होंने हमारे मन में दूसरा विचार बिठाने का प्रयास किया कि हर एक समाज को उसी इतिहास-क्रम से जाना पड़ेगा जिस इतिहास-क्रम से युरोपीय देश गये हैं। मानों यह universal course of events है। किसी भी समाज को उसी प्रक्रिया में से जाना पड़ेगा जिस प्रक्रिया में से युरोपीय देश गये हैं। हमारे पढ़े-लिखे लोगों के मन में यह बात इतनी जँच गयी कि वे भी दोनों में साम्य, सादृश्य, similarity, analogy ढूँढ़ने लगे, और कहीं न कहीं सादृश्य, analogy के आभास का लाभ उठाकर हिन्दुस्थान के इतिहास को युरोप के ऐतिहासिक-क्रम के साँचे में बिठाने का प्रयास करने लगे। हर एक Indian situation को यूरोप के standard से नापने (guage) का प्रयास किया गया। उसके कारण कितना distortion आया है यह हम देख सकते हैं।

१.१ काल निर्णय :— Inferiority Complex निर्माण करने की दृष्टि से उन्होंने पहली यह बात की कि इतिहास का काल-निर्णय पूरा बदल दिया। हमारा इतिहास लम्बा है, अति प्राचीन है। वो जानते थे कि अति प्राचीन देश के लोग अपनी प्राचीनता का स्मरण रखते हैं तो एक गौरव, अभिमान का भाव उनके मन में जाग्रत रहता है। इसलिए उन्होंने इतिहास को नजदीक खींचने का,

काल-निर्णय गलत देने का प्रयास किया। वेद अभी-अभी निर्माण हुए, इस प्रकार काल-निर्णय distort करने का प्रयास किया। चूंकि अंग्रेजों ने ऐसा कहा तो 'साहेब वाक्यम् प्रमाणम्' कहने वाले हमारे लोगों ने इसको मान लिया।

Inferiority Complex निर्माण करने के लिए उन्होंने जो-जो प्रयास किया उसके कारण हमारे मन के ऊपर जो-जो गलत impressions हुए हैं वो सारे गलत impressions हम धो नहीं डालते तो स्वाभाविक रूप से हमारे मन में यह निष्कर्ष आयेगा कि Western paradigm is the universal model of development and progress.

१.२ आर्य :—दूसरा बुद्धिभेद निर्माण करने का प्रयास किया गया Aryan Invasion Theory से। ये बाहर से आये थे। शासन जमाये थे, साम्राज्य जमाये थे। उन्होंने हमसे कहा कि हम बाहर से आये थे ठीक है, किन्तु आप भी कहाँ से आये ? आप कोई original लोग थोड़े ही हैं। आप भी बाहर से आये हैं। यहाँ के आदिवासी तो दूसरे ही थे। वे जंगल में भाग गये दक्षिण दिशा में भाग गये। हम भी बाहर के हैं। आप भी बाहर से आये। ठीक है, हम २०० साल पहले आये, आप पाँच हजार साल पहले आये। किन्तु आप भी हमारे जैसे पराये आक्रामक ही हैं। यह जो Aryan Invasion Theory है यह हमारे मन में बिठाने का प्रयास किया गया। सौभाग्य की बात है कि आदरणीय बाबा साहब अम्बेदकर आदि विद्वानों ने प्रमाण देते हुए कहा कि यह Aryan Invasion Theory गलत है।

अब तो पाश्चात्य देशों का साम्राज्य नष्ट होने के बाद, अमरीका, इंगलैंड आदि देशों में विभिन्न Archeologists, Anthropologists, Historiographers and Philologists ऐसे निर्माण हुए हैं कि जो स्वतन्त्र बुद्धि से यह कह रहे हैं कि Aryan Invasion Theory पर पुनः विचार करना पड़ेगा। Archeology, Anthropology, Historiography और Philology, इन चारों शास्त्रों की दृष्टि से आर्य बाहर से आये, यह प्रमाणस्वरूप नहीं माना जा सकता, इनमें पुनः अन्वेषण करने की आवश्यकता है। अब हमारे विद्वान भी यह सोच रहे हैं कि इसमें पुनः अन्वेषण होना चाहिए क्योंकि पश्चिम के लोग कह रहे हैं तो यह झूठ नहीं हो सकता।

१.३ यूरोपीय मोनार्की (Monarchy) और भारतीय राजा :—अब उनके

यहां in course of history, मोनार्की निर्माण हुई। बाद में सत्ता nobility के हाथ में रही। वहां चर्च एक संगठित संस्था थी। उन्होंने कहा कि चूंकि ये सभी संस्थाएँ यूरोप में थी, तो हर एक समाज में इन संस्थाओं का निर्माण कभी न कभी हुआ ही होगा। Analogy ढूंढ़ने लगे। हमारे यहाँ के राजा-संस्था को देखा तो उन्होंने कहा कि our Monarchy is similar to your Raja institution। वास्तव में मोनार्की यह बिलकुल अलग बात है। हमारा राजा 'प्रजानुरंजनात् राजा', 'षष्ठांशभोगी भृत्यो राजा', 'वर्णाश्रमधर्म प्रतिपालको राजा' आदि हैं। राजा यह chief Executive officer है। राजा को कानून बनाने का अधिकार नहीं था। कानून का implementation करना, केवल उसका कर्तव्य था। Guardian of the social constitution यही उसकी भूमिका थी। वह Maker of the constitution नहीं था। हमारे यहाँ राजदंड कभी सर्वोच्च नहीं माना गया। राजदंड के ऊपर धर्मदंड माना गया जो नैतिक नेताओं का था। सर्वोच्च सत्ता यदि किसी के हाथ थी तो नैतिक नेताओं के हाथ थी, जिनके हाथ न आर्थिक सत्ता थी, न राजनैतिक सत्ता थी, न शासकीय सत्ता थी, ऐसे जो नैतिक नेता, लँगोटी लगाने वाले, जंगल में रहने वाले लोग, किन्तु सम्पूर्ण समाज पर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' 'अयम् निजोपरोवेत्ति गणना लघुचेतसाम् ॥ उदारचरितानाम् तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥" इस वृत्ति से चलने वाले, लँगोटी लगाने वालों की सत्ता सर्वोच्च थी। उनका अधिकार हर एक को मानना पड़ता था। हमारी अलग संस्कृति है। भौतिकवाद के पीछे लगे हुए पश्चिम की Monarchy की निरंकुश सत्ता और हमारे राजा की अंकुशयुक्त सत्ता में बहुत अन्तर है किन्तु Analogy है, Similarity है। अतः उन्होंने कहा कि यहाँ भी Monarchy थी।

१.४ चर्च और पुरोहित :--उन्होंने कहा यहाँ nobility थी। हमारे यहाँ सरदार थे, बाकी लोग थे, लेकिन यूरोप में जैसी organised nobility थी उस तरह की यहाँ नहीं थी। और चर्च तो यहाँ बिलकुल नहीं थे। किन्तु analogy के पीछे पड़े हुए लोगों ने कहा कि यहाँ पुरोहित थे, तो यहाँ चर्च भी था। पुरोहित और चर्च में बहुत अन्तर है। Organised priest-hood is church, a group of scattered, individual priests is not an organised church. अलग-अलग पुरोहित हमारे यहाँ हैं। लेकिन सब मिल

कर organised church यहाँ नहीं हैं।

इसके कारण वहाँ चर्च और उसके खिलाफ protest करने वाले protestant; ऐसी परिभाषा आ गयी। हमारे यहाँ भी समाज में सुधार के लिए जिन्होंने प्रयास किया ऐसे लोगों को protestant कहा गया। अरे, किसके खिलाफ protest, काहे का protest। There is no authority against which they could protest. उनके यहाँ एक चर्च था। हमारे यहाँ पुरोहित थे। लेकिन पुरोहितशाही नहीं थी। Priest-hood नहीं थी। लेकिन जो course of history यूरोप की थी वह हमारे यहाँ भी होना चाहिए, यह आग्रह होने के कारण कहा गया कि यहाँ चर्च भी था, यहाँ protestant भी थे।

वैसे ही आर्थिक दृष्टि से देखा जाय तो सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से उनके यहाँ एक Course आया--From primitive communism, slavery feudalism, capitalism, socialism, to communism. एक पद्धति आयी है। अच्छा है-बुरा है, का सवाल नहीं है। उनका आग्रह रहा है कि यही hisrorical course हर एक समाज का रहना चाहिए। मुहम्मद कुतुब एक fundamentalist Islamic historian हैं। उनके हर एक विचार से हम सहमत हैं ऐसा नहीं। लेकिन उन्होंने स्पष्ट रूप से ऐसा कहा कि यूरोपीय विचाकों को हमें बताने का समय आ गया है कि आपका जो historical course of development है वह universal नहीं है। यूरोप के बाहर कहीं भी किसी भी समाज में ऐसा नहीं है। इसलिए आप की जो Institution हैं उनको universalised बताना गलत बात है। ऐसा मुहम्मद कुतुब ने कहा है। मैं समझता हूँ कि इतने मत से तो हम सहमत हो सकते हैं।

२. धर्म :--वैसे analogy ढूंढ़ने के चक्कर में जो शब्द के लिए प्रतिशब्द दिये गये इनके कारण समझदारी में इतनी गड़बड़ हो गयी है जिसके परिणाम हम भुगत रहे हैं। अब आप जानते हैं कि धर्म और religion ये प्रतिशब्द हैं। अब मैं इसके विवरण में नहीं जाऊँगा। लेकिन अब तो ये सब जान गये हैं कि धर्म एक अलग बात है, religion एक अलग बात है। Dharma is universal, religion is strictly personal. Religion is not Dharma. लेकिन कुछ बाहर से आकार-विकार religion का और धर्म का देखा तो उन्होंने कहा

कि धर्म माने Religion ।

३. राष्ट्र :—वैसे ही 'Nation' Concept है । मैं सभी विचारकों से यह प्रार्थना करना चाहता हूँ कि Let us consider, reconsider whether the 'Nation' and the Rashtra are the same ? हमारा राष्ट्र अत्यन्त पुरातन है; सनातन है। यहाँ जो राष्ट्र निर्माण हुआ है वह किसी की प्रतिक्रिया में निर्माण नहीं हुआ ।

जिस समय हम civilised थे उस समय बाकी के समाज civilised नहीं थे । इसी के कारण कृण्वन्तो विश्मार्यम्, माने, we are civilised and we will bring other societies at the level of our own civilisation. ऐसा हम लोगों ने कहा, और उस समय प्रतिक्रिया के स्वरूप नहीं तो; हम सुसस्कृत है, बाकी के लोगों को भी सुसंस्कृत करेंगे यह प्रेरणा होने के कारण हमारी राष्ट्रीयता और Internationalism दोनों एकरूप थे । मैं तो ये कहूँगा कि हमारा यह जो राष्ट्रीयत्व है, It was a base of operation for internationalism. ऐसी यह रचना थी । Positive content और प्रेरणा को लेकर हमारे यहाँ राष्ट्र की कल्पना निर्माण हुई ।

पश्चिम की जो 'Nation' concept है वह प्रतिक्रियात्मक है । मैं आह्वानपूर्वक कहना चाहता हूँ कि 'प्रतिक्रियात्मक' । चाहे प्रकृति के खिलाफ प्रतिक्रिया हो, चाहे नैपोलियन के Austrian Empire के खिलाफ प्रतिक्रिया हो, किन्तु प्रतिक्रिया के रूप में ही और उसके कारण, पश्चिम का Nation concept और हमारा राष्ट्रीयत्व-qualitatively they are different.

आज जो हमारे यहाँ कल्पना है कि 'Nationalism' यह एक धारणा है; वह गलत है । Nationalism कई धारणाओं का समूह है । It is a bundle of various concepts and commitments और इसलिए यूरोप में भी अलग-अलग देशों में Nationalism के नाम पर चलने वाली भावनाएँ एक हैं क्या ? ये सभी भावनाएँ, Nationalism के ingredients एक हैं क्या ? ये ingredients एक नहीं हैं । Italian nationalism के ingredients different हैं, French nationalism से । फ्रेंच Nationalism के ingredients, German Nationalism के ingredients से different हैं । ये ठीक है कि बहुत से common factors हैं overlapping हैं । लेकिन

all the ingredients are not identical.

इस दृष्टि से Nationalism बोलने से भी यूरोप में उसकी कितनी varieties है, उसका स्वतन्त्र रूप से अध्ययन होना चाहिए। और कुछ लोगों ने अध्ययन किया भी है। Mr. Snyder and others have written a thesis about 'The Varieties of Nationalism.' यह उसके thesis का नाम ही है, तो उनके Nationalism के भी कई प्रकार हैं क्योंकि उनके हर एक देश का Course of historical development अलग रहा है। हमारे देश का तो बिलकुल ही अलग रहा है। इसलिए 'राष्ट्र' और 'Nation' ये दोनों Concepts एक ही हैं क्या ? यह सोचनने की आवश्यकता है।

इसी प्रकार यह भी सोचना चाहिए कि संस्कृति, Culture और Civilisation ये Synonymous हैं क्या ? Interchangeable हैं क्या ? इस पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। Terminology के कारण ये गड़बड़ियाँ हुई हैं।

४. हिन्दुत्व :—मैं विनम्रता के साथ यह सुझाव देना चाहता हूँ कि हम ये सोचें कि अंग्रेजी परिभाषा के अनुसार Hinduism शब्द का प्रयोग किया गया है, वास्तव में Hinduism' शब्द ठीक है क्या, यह सोचने की आवश्यकता है। यदि उसके लिए Ism शब्द का प्रयोग किया जाता है तो it will be at par with other isms;--which is not the case. हिन्दुत्व का भाषान्तर Hinduness होना चाहिए, Hinduism नहीं हो सकता। Hinduism शब्द का प्रयोग करने से बड़ी गड़बड़ी हो सकती है। यह पश्चिम के प्रभाव का परिणाम रहा है कि हमने इस शब्द को adopt किया। (मैंने भी किया)

ऐसे ही बातचीत में उन्होंने कुछ terms introduce किये, apparently innocently. वे कहते हैं कि यहाँ सभी लोग हैं, हिन्दू हैं, सिख हैं, जैन हैं, बौद्ध हैं। हम लोगों ने भी उनका अनुकरण किया, यह न सोचते हुए कि यदि हम ऐसा कहेंगे कि यहाँ हिन्दू, बौद्ध, जैन, सिख हैं और फिर कहेंगे कि हिन्दू बौद्ध जैन सिख एक ही हैं, तो दोनों बातें मेल खाती हैं क्या ? आप यदि कहें कि वैदिक, बौद्ध, जैन, सिख तो ये एक अलग बात है। लेकिन यदि आप एक तरफ कहेंगे कि सभी हिन्दू हैं, और फिर उसी सांस में कहेंगे "हिन्दू, जैन,

बौद्ध, सिख" तो इसका Psychological impact क्या होता है, इसका विचार हम करें। चूंकि अंग्रेज कह रहे थे और वो किसी उद्देश्य से कह रहे थे, ulterior motive से कह रहे थे, इसका क्या परिणाम होता है; इसको हमें सोचना चाहिए।

५- भारतीयता :—भारतीयता क्या है, यह समझने के लिए जो कुछ बातें हमारे मन और दिमाग में चढ़ी हुई हैं, उनको धो डालने की आवश्यकता है। जैसे कोई कपड़ा है और कहा गया कि उस पर अच्छा चित्र अंकित करो—अच्छा रंग अंकित करो। अब यदि कपड़ा मैला है या उस पर और कोई चित्र पहले से अंकित किया गया है और उसके ऊपर दूसरा कोई चित्र अंकित करना है तो पहला जो चित्र है उसे धो डालना पड़ेगा, मैल धो डालना पड़ेगा, कपड़ा स्वच्छ करना होगा, तभी उस पर दूसरा रंग आ सकेगा। वैसे ही अंग्रेजों के motivated गलत प्रचार के शिकार होने के कारण जो गलत बातें हमने सीखीं हैं वह पहले भुलाना पड़ेगा। So we have to unlearn first the wrong things taught to us by Europeans. यह unlearning process जब तक शुरू नहीं होगी, तब तक वास्तव में भारतीयता क्या है यह समझना कठिन होगा। यह स्पष्ट है। इस दृष्टि से अपना मानस स्वच्छ करने के लिए कई बातें भूलने की आवश्यकता है।

५.१ इतिहास:—इस संबंध में पहली बात, World History फिर से लिखने की आवश्यकता है। किसी ने ऐसा कहा है कि शेर का चित्र जब आदमी खींचता है तो वह शेर हिंस्र, क्रूर ऐसा दिखाई देता है। लेकिन उसने कहा, जरा सोचिए, यदि शेर मनुष्य का चित्र बनाएगा तो शायद जैसे हम शेर को हिंस्र दिखाते हैं वैसे ही शेर भी मनुष्य को हिंस्र दिखायेगा।

अब ये यूरोपियन races, अफ्रीका में गयीं आस्ट्रेलिया में गयीं, अमरीका में गयीं अन्य-अन्य देशों में गयीं तो Genocide सामूहिक हत्याएँ उन्होंने कीं- वहाँ के लोगों की। अब World History यदि Red Indians लिखेंगे, नीग्रो लिखेंगे, Australia के ab-origins लिखेंगे, तो किस तरह लिखेंगे। किन्तु दोनों extremes पर न जाते हुए, यूरोपियन दृष्टिकोण से जो World History लिखी गयी है उसको revise करने की आवश्यकता है। वैसे ही हिन्दुस्थान का इतिहास भी संतुलित दृष्टि से लिखने की आवश्यकता है।

कई बातें लोग जानते ही नहीं। सारी चीजें,यूरोपीय लोगों की सुविधा के अनुसार adjust की जाती हैं। वास्तव में ठीक इतिहास हमारे सामने नहीं है। कई चीजें ऐसी हैं जो हमारे लिए बहुत गौरवशाली होते हुए भी हमारे सामने आती ही नहीं।

मैं कहना चाहूंगा कि क्या अभी तक लोगों को पता था कि बिल्कुल पाँच सदियों पहले तक हिन्द महासागर में हमारा साम्राज्य था ? क्या इस बात का लोगों को पता था ? यह तो historical fact है। लेकिन पढ़ाया जाता है कि एक के बाद दूसरे वायसराय आये, फिर तीसरे वायसराय आये। लेकिन हम लोगों ने हिन्द महासागर में अलग-अलग द्वीपों में South East Asia में साम्राज्य नहीं बल्कि वहाँ के स्थानीय लोगों में सहकार्य करते हुए; राज्यों की स्थापना की, इसका वर्णन हमारे इतिहास में नहीं आता।

दूसरी बात, कितने लोग जानते हैं कि Civil Service नाम की जो Institution है, यूरोपियन लोगों को शासन संस्था जब मालूम नहीं थी, उस समय हिन्दुस्थान में आर्य चाणक्य ने Civil Service organise की थी। कौटिल्य पहला श्रेष्ठ पुरुष था जिसने Civil Service निर्माण की थी। कितने महत्त्वपूर्ण facts हैं, जो हम लोग जानते हैं। इस प्रकार इतिहास जो लिखा गया; वह motivated था। अतः भारत का इतिहास फिर से लिखे जाने की आवश्यकता है।

५.२ शिक्षा :— सबसे बुरी बात जो हमें बताई गयी कि यहाँ Education नहीं था। अंग्रेजों के आने के बाद Education यहाँ प्रारम्भ हुआ। आज ऐतिहासिक तथ्य है कि अंग्रेजों के आने के पहले यहाँ Education ज्यादा था; गाँव-गाँव में फैला हुआ था। हाँ, इस तरह का Education नहीं था जो प्रचारित किया गया है। यहाँ की परिस्थिति के अनुसार जो Education था वह गाँव-गाँव में फैला हुआ था; ऐसा वर्णन यहाँ आये हुए अंग्रेजों ने अपने मातृभूमि से भेजे हुए पत्रों में दिया है।

५.३ समन्वित जीवन :— विशेष रूप से हमारे यहाँ जो बहुत बुरा परिणाम हुआ है मूल्यों के बारे में; Values of Life के संबन्ध में। जो कुछ पश्चिम का है वो अच्छा है, जो-जो हमारे यहाँ का है वह खराब है; ऐसा सोचने के कारण हमने उनके भौतिकवादी मूल्यों को स्वीकार किया है। वास्तव में हमारे

लिए भौतिकवाद नया नहीं है। लोग समझते हैं कि materialism पश्चिम में पैदा हुआ, गलत बात है। पहला Materialistic Philosopher हिन्दुस्तान का था। बृहस्पति था। Materialist Philosophy का पहला सूत्र 'असतो सत् अजायत'-out of nonexistenee, emeaged existence, यह हिन्दुस्तान में निर्माण हुआ है। बृहस्पति से लेकर चार्वाक तक a line of thinkers has come. उनके प्रति कोई प्रतिबन्ध नहीं था। In a free and fair competition, materialism has suffred a defeat यह किसी प्रतिबन्ध के कारण नहीं, तो वह qualitatively inferior था इसलिए defeat खा गया। लेकिन हमारे यहाँ लोग समझते हैं कि यहाँ लोग आकाश की तरफ देखते थे, materialism के बारे में कुछ जानते ही नहीं थे। हमारे यहाँ समन्वित जीवन का उद्देश्य दिया है— समुत्कर्ष-निःश्रेयस। Material Progress and Spiritual elevation. के समन्वय का अर्थ है–समन्वित जीवन।

हम अभी चाइना गये थे। आप को आश्चर्य होगा कि वहाँ Chinese Government जो Communist Government है उसने अधिकृत घोषणा की है, अधिकृत मानें official, Govrnmental, कि हमने ३० साल तक Materialism को स्वीकार किया यह बहुत बड़ी गलती थी। इसके कारण China का बहुत नुकसान हुआ है। यह है उनका official declaration without any reservation. और इसलिए उन्होंने कहा कि हम Material Progress तो अवश्य लाना चाहते हैं लेकिन Materialist Philosophy के कारण जो नुकसान हुआ है उसे ठीक करने के लिए Spiritual civilisation लाना चाहते हैं। ऐसा उन्होंने १९७९ में कहा। जो Materialist Philosophy कम्युनिस्ट चायना भी भूलना चाहता है उसको हम भारतीय न भूलें, यह उचित होगा क्या ?

५.४ मनोविज्ञान :—हमें बताया जाता है कि मनोविज्ञान शास्त्र यह पश्चिम की देन है। वास्तव में यूरोप का मनोविज्ञान शास्त्र अभी-अभी शुरू हुआ है। फ्रॉयड वगैरह से। यानी यूरोप की बच्ची साइकालाजी है। हमारे यहाँ साइकालॉजी अत्यन्त प्राचीन है। पंतजलि उसका श्रेष्ठ व्याख्याता रहा है। हमारे यहाँ के Psychologists ने कहा है कि मनुष्य के मन का पाँच स्तर पर विचार होना चाहिए। मूढ़, क्षिप्त, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध। जिनमें

से पहली दो stages हैं, यानी नीचे के दो stages हैं मूढ़ और क्षिप्त। इन्हीं तक पाश्चात्य मानसशास्त्री पहुँचे हैं। ऊपर के stages तक पहुँचे ही नहीं। हमारे यहाँ के, अंग्रेजों के मानसपुत्र कह रहे है कि हमारे यहाँ Psychology नहीं थी। यह गलत बात है। आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय मानसशास्त्र पर research करते हुए ठीक ढंग से Indian Psychology लिखी जाय।

५.५ तत्त्वज्ञान :—आप को आश्चर्य होगा कि बहुत से लोग ऐसा समझते हैं कि पाश्चात्य तत्वज्ञान का इतिहास, दुनियाँ के तत्वज्ञान का इतिहास है। वैसे देखा जाय तो पाश्चात्य तत्वज्ञान का इतिहास केवल २६०० वर्ष का है। हमारे यहाँ तत्वज्ञान का विचार वेदकाल के नासदीय सूक्त से हुआ। 'नासदासीद् नोसदासीत् तदानीम्', यह जो कहा गया तभी से हमारे तत्वज्ञान का प्रारम्भ है। अब यह कब कहा गया; यह जब वेदकाल का निर्णय होगा तब हम कहेंगे कि यह तभी शुरू हुआ है। लेकिन २६०० वर्ष से बहुत पहले नासदीय सूक्त कहा गया है। तो World Thought का इतिहास ठीक ढंग से लिखने की आवश्यकता है।

पाश्चात्य तत्वज्ञान के नाते हमारे यहाँ जो पढ़ाया जाता है उसमें imbalance है। पूरा पाश्चात्य तत्वज्ञान का भी इतिहास उसमें नहीं है। अभी-अभी तक जो रूसी तत्वज्ञान हैं उनके बारे में कुछ नहीं आता था। खास कर लातीनी अमरीका में जो तत्वज्ञानी हो गये हैं उनमें से एक का भी जिक्र पाश्चात्य तत्वज्ञान के आफिसियल इतिहास में नहीं आता है। केवल Anglo-Saxon Countries और यूरोप के देश इनके ही तत्वज्ञान के इतिहास को world तत्वज्ञान का इतिहास कहा जाता है। यह imbalance दूर करने की आवश्यकता है। संतुलित, समन्वित, इस प्रकार की history of world thought लिखने की आवश्यकता है।

५.६ धर्म और विज्ञान :—धर्म और Science के बारे में भी फिर से research करके लिखने की आवश्यकता है। ऐसी परिस्थिति आयी है। मैं यह इसलिए कह रहा हूँ कि religion और science का मेल christianity के बारे में नहीं बैठ सकता था। इसलिए मार्क्स ने कहा कि religion is an opium. हमारे यहाँ लोगों ने कहा कि religion is dharma तो dharma is an opiun. वास्तव में धर्म अलग है। religion अलग है।

और धर्म का science से कोई संघर्ष नहीं है। इस दृष्टि से ऋषियों ने, मुनियों ने, intution के आधार पर निष्कर्ष निकाले थे। आप लोगों में से बहुत से लोगों को पता होगा कि Modern science is approaching the conclusions drawn by our seers through intution और इस दृष्टि से कुछ नयी किताबें आ रही हैं उनमें से दो प्रसिद्ध हैं 'The Tao of Physics' और 'The Turning Point' किन्तु और भी कितनी ही किताबें आयी हैं। अतः Science के observations के आधार पर हम कह सकते हैं कि धर्म के नजदीक Science आ रहा है। Religion से Science बहुत दूर जा रहा है। इसके विषय में भी जो वस्तुस्थिति है उसे reconstruct करके जनता के सामने रखने की आवश्यकता है।'।

एक नया युग शुरू हुआ– अणुयुग। उस समय की एक घटना, बड़ी मनोरंजक घटना है। रॉबर्ट ओप्पेन हायमर ये पहले श्रेष्ठ पुरुष थे इस शास्त्र के उन्होंने कहा कि "desert में हम लोग प्रयोग कर रहे थे spliting of the atom के बारे में। मुझे संदेह था कि यह प्रयोग भी फेल होता है क्या? दूर से मैं देख रहा था। और जैसे ही atom का विस्फोट हुआ, मेरे मुँह से अनायास ऐसे शब्द निकले, " I have become Death the shatterer of the world." यानी गीता का English translation है। कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो। अनायास उनके मुँह से ये शब्द निकले, ऐसा उन्होंने अपनी diary में लिखा है। आश्चर्य की बात है कि ये जो pure and simple Scientist हैं उसे गीता याद थी और जो पहला atomic विस्फोट हुआ उस समय न Bible का कोई खयाल आया न Scintists के किसी वाक्य का खयाल आया। यह बड़ी सूचक घटना है; बड़ी significant है।

६. समन्वित दृष्टिकोण–भारतीय विशेषता :–सबसे बड़ा सवाल आज जो आता है, वह technology के बारे में आता है। और जो विषय रखा गया है उसका ज्यादा दिशा-निर्देशन technology के बारे में है ऐसा मुझे लगता है। Technology के बारे में बहुत धुआँधार प्रचार हो रहा है। अब प्रचार के बारे में हिटलर ने कहा है कि यदि सारा प्रचार media मेरे हाथ में रहे तो मैं इस तरह से प्रचार करूँगा कि जर्मन देश को आत्महत्या करने के लिए प्रवृत्त कर सकूँगा। 'त्रयाणाम् धूर्ताणाम्' जो प्रचार का नमूना है वह सब

लोग जानते हैं ।

अब Western Technology है । भारतीयता के प्ररिप्रेक्ष्य में Western Technology और Education का विचार कैसे हो सकता है ? तो Education के विषय में हम कहेंगे कि दुनियाँ में जितना भी ज्ञान है वह हमें प्राप्त करना चाहिए । और फिर भारतीय परम्परा, परिस्थितियों और आवश्यकताओं के प्रकाश मे तय करना चाहिए कि तकनीकी के विषय में प्राप्त किये आधुनिक ज्ञान का कौन सा हिस्सा भारत को adopt करना चाहिए,कौन सा adapt करना चाहिए और कौन सा reject करना चाहिए । किन्तु ज्ञान तो पूरा ही संपादन करना चाहिए । knowledge न केवल भारत का है, न पश्चिम का है, न पूरब का है । knowledge is universal. Scientific knowledge और technology तो ऐसी है कि कोई भी देश यदि science या technology में नयाँ invention करता है तो थोड़े ही दिन में वह सारी दुनियाँ में प्रसृत हो जाता है । वैसे भी knowledge पर किसी देश का monopoly claim नहीं रह सकता ।

भारतीयता का मतलब क्या है ? ज्ञान प्राप्ति के बारे में भारत की कुछ speciality रही है । वह भारतीय है । पश्चिम का विचार लगभग अभी तक Compartmentalised thinking का रहा है । एक discipline का अलग विचार, दूसरे discipline का अलग विचार तीसरे discipline का अलग विचार । हमारे यहाँ Integrated approach रहा है । एक ही विषय पर we brought to bear upon the same subject the knowledge of all the various disciplines. उनके यहाँ Compartmentalised thinking बहुत चली । इतना है कि second world war के दबाव में आकर कुछ विषयों में अलग-अलग disciplines का एक ही समय-Simultaneously आधार लेकर समस्याओं का समाधान निकालना पड़ा । inter-disciplinary approach लेना पड़ा । और अब उन्होंने इसका एक Scince ही बना दिया है; जिसका नाम रखा है Synectics । इस तरह वे हमारी लाइन पर आ रहे हैं । लेकिन बहुत देरी से आ रहे हैं । वो जब पूरी तरह से आ जायेंगे तो हमारे यहाँ लोग कहेंगे कि यही approach ठीक था, क्योंकि पश्चिम के लोग वैसा कह रहे हैं । पहले से ही हमारी Integrated

approach रही है। They are slowly, gradually drifting towards our approach. हमारी पहले से ही यह speciality रही हैं।

७. तकनीकी ज्ञान:--तकनीकी क्षेत्र में भी यह विशेषता निभाना अति आवश्यक है। Technology के विषय में जो भी ज्ञान होगा उसे प्राप्त करना बहुत ही आवश्यक है। किन्तु हमारे यहाँ गड़बड़ है कि एक बार जो ज्ञान प्राप्त किया– उसका application तुरन्त आवश्यक माना जाता है। दूसरों का ज्ञान लेने में कभी परहेज नहीं है।

प्राचीन काल में जहाँ देवासुर संग्राम चल रहा था। हमारे पास सर्जरी नहीं थी। असुरों के पास सर्जरी थी। हमारे कचदेव को भेजा गया कि शुक्राचार्य के पास जाइये और उनसे सर्जरी सीखकर आइये। आज भी हम लोग अमरीका भेजते है उसकी विद्या सीखने के लिए; इसमें आपत्ति नहीं है। किन्तु जो-जो विद्या हम सीख कर आते हैं उसका सारा application करना ही चाहिए, क्योंकि वो पश्चिम की विद्या है इस presumption के कारण गड़बड़ पैदा होती है।

तो technology के विषय में हमारे दृष्टिकोण क्या रहे यह समझकर हम सम्पूर्ण technology जहाँ कहीं की हो, पूरब की हो पश्चिम की हो, उत्तर की हो, दक्षिण की हो, हम अवश्य ग्रहण करें। लेकिन यह समझकर कि इसमें हमारी परिस्थितियां, हमारी आवश्यकताएँ, हमारी परम्परा, इन सबका विचार करते हुए हमें technology का application करना है। इसी आधार पर हमको तय करना है कि पश्चिमी तकनीकी का कौन सा हिस्सा adopt, कौन सा adapt और कौन सा reject करना है।

Integrated approach यह हमारी भारतीय शिक्षानीति की विशेषता बनी रही है। हमने specialisation का महत्व मान लिया है। किन्तु यह सोचते हुए कि human life is integrated not compartmentlised, mind is integrated not compartmentlised हमने शिक्षासंस्कारों के विषय में integral thinking किया है। उसी के अन्तर्गत specialisation को स्वीकार किया है। हमारे देश में specialisation है, किन्तु वह integrated view of life के परिप्रेक्ष्य में बिठाया जाने के कारण उसका compartmentalisation नहीं हुआ। और हमारे कई प्रमाण उन ग्रन्थों के

बारे में आंग्लविद्या विभूषित लोग असमंजस में आते हैं कि उनको किस category में डाला जाय। उदाहरणार्थ, मनुस्मृति। क्या यह धर्म का ग्रंथ है, या समाजशास्त्र का, या राजनीतिशास्त्र का, विधिशास्त्र का, या अर्थनीति का? किस category में इसको डालेंगे। वही बात हमारे विचारकों की भी है। केवल उदाहरण के लिए बताना हो तो समर्थ रामदास की बात लीजिये। उनका 'दासबोध' ग्रंथ सुप्रसिद्ध है और उसका हिन्दी भाषान्तर भी उपलब्ध है। हॉब्स, लॉक, स्पिनोजा, देकार्ता और लिब्निज ये सब समर्थ रामदास के contemporaries समकालीन थे उनकी श्रेणी तो निश्चित हुई है। रामदास जी की श्रेणी कौन सी मानी जाय? एक विद्वान ने कहा है कि उपरिनिर्दिष्ट पाँचों यूरोपीय विद्वानों के साहित्य में दिखने वाला समाजशास्त्र तुलनात्मक दृष्टि से समर्थ-साहित्य में ग्रथित समाजशास्त्र से निम्न श्रेणी का है। अब रामदास को समाजशास्त्री कहा जाय क्या? इस विशेषण में उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व नहीं समाया जा सकता। उनके साहित्य में विविध शास्त्रों के विषय का गहन चिंतन प्रकट होता है। यह केवल उदाहरण के लिए बताया गया है।

इस तरह integrated approach समन्वित दृष्टिकोण की मार्गदर्शना की विशेषता के आधार पर संपूर्ण पाठ्यक्रम की पुनर्रचना करनी होगी। Arts Sciences, Humanities यह compartmentliston समाप्त करना होगा। मेकॉले तथा उनके देशी-विदेशी मानस पुत्रों द्वारा सिखाई हुई बातें unlearn करनी पड़ेगी, कई ज्ञान-शाखाओं की वास्तविकता के आधार पर पुनर्रचना करनी होगी, भारतीयता के विषय में उचित अभिमान जागृत हो; यह देखना होगा। संवादात्मक भारतीय शिक्षापद्धति का, युगानुकूल सुधारों के साथ, पुनरुज्जीवन करना होगा। इस परिपत्रक में दिग्दर्शित की हुई त्रुटियों को दूर करना होगा। भारतीय शिक्षण मंडल तथा अन्य राष्ट्रभक्त संस्थाओं तथा शिक्षाविदों द्वारा दिये गये सुझावों पर समन्वित विचार करना होगा। इस दृष्टि से शिक्षा से संबन्धित सभी संस्थाओं तथा विद्वानों की गोलमेज परिषद करानी होगी। इस गोलमेज परिषद में प्रकट हुए सुविचारित मतों के प्रकाश में नई शिक्षा नीति निर्धारित करनी पडेगी और इस प्रकार निर्धारित शिक्षा नीति को ध्यान में रखकर नई योजनाएँ, आगामी योजनाएं बनानी होगी।

यह सब करने की सरकार की तैय्यारी न हो तो नई शिक्षा नीति के बारे में चलाई गई यह राष्ट्रीय चर्चा an exercise in futility मात्र सिद्ध होगी।

हम आशा रखते हैं कि सरकार इस तरह की गलती कर स्वयम् अपने को इतिहास के कटघरे में खड़ी नहीं करेगी।

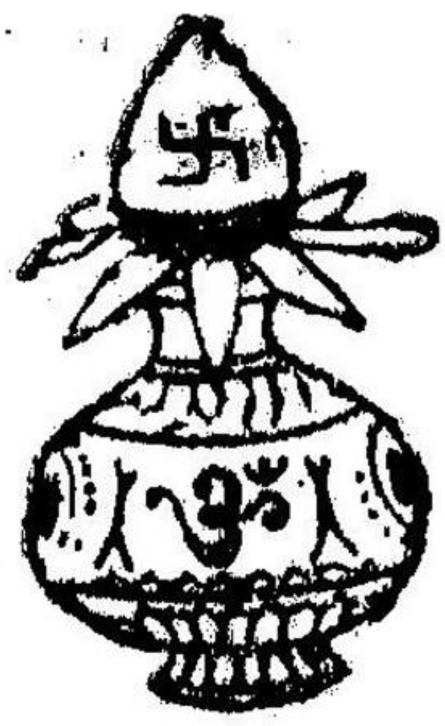

मूल्य—दो रुपया